ORIGINAL RESEARCH PAPER

Hindi

KEY WORDS: अपराध, हिंसा, बलात्कार, अपहरण, व्यपहरण दुष्प्रेरण, दहेज, यौन उत्पीड़न कार्यस्थल, अनैतिक व्यापार, अशिष्ट चित्रण, घरेलू हिंसा, निवारण, संरक्षण, दुर्व्यवहार, व्यवहार प्रतिमान।

भारतेन्दु युगीन नाटकों में राश्ट्रीय चेतना

डॉ. प्रवीण कुमार गांव कंवरपुरा, डाकखाना कुसुम्बी, जिला सिरसा–125055 (हरि.)

भारतेन्दु युग का आरंभ होने से पहले भारत में स्वतंत्रता की पहली तात्कालीक असफल लड़ाई लड़ी जा चुकी थी। 1857 में अंग्रेजी शासकों से निर्णायक लड़ाई लड़ने के लिए जिन कारकों की आव यकता थी, वे कारक भारतीय समाज में पूरी तरह से मौजूद नहीं थे। राष्ट्रवाद का आरंभ बंधुत्व, समानता और स्वाधीनता के असहास से होता है। भारतेन्दुयुग के नाटककारों ने इन्हीं तत्वों को गहराई से उकेरने का प्रयास किया। भारतीय राष्ट्रवाद में सामंतवाद जो विकृति पैदा कर रहा था वह कुछ अंशों में आज भी मौजूद है। यह विकृति भारतेन्दु एवं उनके सहयोगी नाटककारों के नाटकों में भी परिलक्षित होती है। इन विकृतियों को नाटककारों ने अपने नाटकों के माध्यम से समाज को सफल एवं मजबूत बनाने में किया।

भारतेन्दु युग को सन् 1857 ई. से 1900 ई. तक स्वीकार किया गया है। इस दौर के प्रमुख नाटककारों में लाला श्रीनिवासदास, राधाकृष्ण दास, किशोरीलाल, गोस्वामी, गोपालराम गहमरी, बालकृष्ण भट्ट, प्रतापनारायण मिश्र तथा जी.पी. श्रीवास्तव का नाम मुख्य रूप से लिया जाता है। इन साहित्यकारों नें साहित्य की भिन्न–भिन्न विधाओं के माध्यम से देशवासियों को तत्कालीन परिस्थितियों का बोध करवाकर उनमें राष्ट्रीय चेतना का संचार किया। जिससे भारत की जनता को नयी ऊर्जा मिली।

''नाटक के अतिरिक्त ऐसा कोई दूसरा उपाय नहीं था जिससे जनसाधारण की समाजिक दशा का वर्तमान चित्र दिखाकर उसका पूरा–पूरा सुधार किया जाए।'' इसी कारण से भारतेन्दु युग में अधिक नाटकों की रचना की गई। साथ ही नाटकों में आमजन की भाषा तथा कविता का समावेश भी किया। भारतेन्दुयुग के साहित्यकारों ने महसूस किया कि कविता केवल शिक्षित वर्ग तक सीमित रह गई थी, इसलिए कविता के द्वारा जिन संदेशों का संचार न हो सका उसकी पूर्ति नाटकों के द्वारा की गई। डॉ. लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय ने लिखा है – ''बीसवीं शताब्दी के साहित्य के हिन्दी जीवन में जो स्थान उपन्यास साहित्य का है, या जो पूर्व आधुनिक कालों में महाकाव्य का था वही स्थान भारतेन्दु युग में नाट्य साहित्य का था। उसमें जीवन के नवीन सत्यों की उपलब्धि और आत्म–संस्कार का मांगलिक एवं अभिनन्दनीय प्रयास है।''[2]

इस काल के नाटकों में राष्ट्रीयता की धारा का संचार हुआ क्योंकि नाटक ही ऐसा माध्यम था जिसके द्वारा आम जनमानस के हृदय में कम समय में राष्ट्रीय चेतना की भावना पैदा जा सकती थी। भारतेन्दु नवजागरण के अग्रदूत बनकर आये। स्पष्ट है कि इस युग के अधिकतर नाटकों में राष्ट्रीय चेतना प्रमुख रूप से पाई जाती है और उनमें राष्ट्रीय चेतना के भिन्न–भिन्न तत्व समाविष्ट है –

अम्बिका दत्त व्यास के नाटक 'गो–संकट' की भूमिका में सूत्रधार का कथन है – ''सूत्रधार (समाज की ओर देखकर) आज तो समाज में बहुत उत्तम जन देश की उन्नति में तत्पर और शुद्ध हिन्दी के आग्रही लोग जुड़े हैं ... निसंदेह ये लोग कोई नाटक लीला देखना चाहते हैं।''[3] सूत्रधार के माध्यम से अम्बिका दत्त व्यास ने तत्कालीन नाटकों के उद्देश्य पर भी प्रकाश डाला।

पं. प्रताप नारायण मिश्र ने भी अपने नाटकों में भारत के गौरव ाली अतित को दोहराया।

भरत के भुज बल जग रच्छित
भारत विद्यालहि जगत सिच्छित।
भारत तेज जगत विस्तारा
भारत भय कंपत संसारा।।

देश प्रेम से आकुल, नव–निर्माण की उमंग से प्रेरित तथा जन्मभूमि की सेवा की अदम्य लालसा ने राष्ट्रीय जागरण की भूमिका प्रस्तुत कर दी। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र तथा उस युग के अन्य नाटककारों ने अपने चारों और के जीवन तथा भारतीय पुराणों तथा इतिहास से संवेदना स्वीकार करके जीवन को पुष्टकर जन–मन की वीणा से नवीन स्वर झंकृत करने का सराहनीय प्रयत्न किया।''[5]

भारतेन्दु युग के नाटककार एक नया और समस्त दृष्टिकोण लेकर देश और जाति के विशाल प्रांगण में प्रवीण हुए। इनके प्रवेश के साथ ही इस युग में नई चेतना का सूत्रपात और नई दिशा तथा पश्चिमी विचारों का प्रकाश तेजी से फैलना आरंभ हुआ। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र तथा उनके साथी नाटककारों ने अपने चारों ओर के जीवन तथा भारतीय पुराणों तथा इतिहास से संवेदना स्वीकार की और भारतीय जनता के जीवन को पुष्टकर करने की कोि ा ा की। इन नाटककारों ने राजहित और राष्ट्र के कल्याण की तीव्र भावना प्रकट की। परिणामस्वरूप इस काल में स्वदेश संगठन की लहर सी दौड़ गई।

श्री राधाचरण गोस्वामी ने अपने नाटक 'अमर सिंह राठौर' के माध्यम से देश प्रेम की भावनाओं को जन–जन तक पहुँचाया।

जय भारत, जय भारत, जय भारत कहुरे।
भारत की भक्ति करो, भारत में रहु रे।।
भारत सम और देश त्रिभुवन में नाहीं।
सकल देश सभ्य भये जाकी परछाई।।
धर्म, कर्म, धन, जन, बल भारत में राजै।
भारत की विजय मेरी दशहुँ दिशा बाजै।।

देवकीनंदन त्रिपाठी 'भारत हरण' में नारद जी के गीत के माध्यम से राष्ट्रीय चेतना की लौ को बढ़ाते हैं –
भारत के बाम भारती विराजैगी
कंचनमेघ झरैगा नित झर झर, ज्ञान–विवेक–बुद्धि जग भ्राजैगी।
प्रकृति प्रभाव कला–कौशल की, नित नूतन चहुँ दिशि छवि छाजैगी।।

भारतेन्दु के रास्ते पर चलते हुए प्रेमघन ने भी अपनी कृतज्ञता तथा भक्ति का प्रदर्शन किया। उन्हें भारत की भूमि से बढ़कर दुनिया में अन्य कोई भी स्थान सुन्दर एवं सुख कर प्रतीत नहीं होता उन्होंने अपने नाटक 'भारत सौभाग्य' में मातृत्व प्रेम को जनता के समक्ष रखा ताकि जनता में चेतना की जागृति पैदा की जा सके –

मेरी यह जन्मभूमि, प्रिय न ओर यासी।[8]

प्रेमघन साहित्य में अपनी राष्ट्रीय सूझ–बूझ से निरंतर आगे बढ़ते गये साथ ही अन्य सभी नाटककारों ने इस सिलसिले को बढ़ाया। शरत्कुमार मुखोपाध्याय और राधकृष्णदास ने भी अपने नाटकों में मातृभूमि के प्रति अपनी प्रगाढ़ भक्ति प्रकट की है। 'रानी पद्मावती' में राजा रत्नसेन के कथन में भी राष्ट्रीय भावों की मार्मिक अभिव्यंजना हुई है – 'यदि यह पामर शरीर अपनी मातृभूमि के कुछ भी काम आवे तो इससे बढ़कर और पुण्य का क्या फल है?'[9]

डॉ. गोपीनाथ तिवारी के अनुसार – 'जिन नाटककारों ने भी देश–प्रेम पर अपनी कलम चलाई है, उन्होंने प्राचीन भारत का गुण अवश्य गाया है।'[10] तत्कालीन नाटककार भारत की जनता को अतीत के सुनहरे इतिहास का हवाला देकर वर्तमान समय में राष्ट्र के प्रति चेतना को जगाना चाहते थे। प्रताप नारायण मिश्र वर्तमान की तुलना अतीत से कर देशोद्वार की प्रेरणा 'भारत दुर्दशा रूपक' में देते नजर आये – 'कहाँ वह सार्वभौम राज्य? कहाँ यह दुर्दशा? कहाँ एक दिन यह था कि इन्हीं पूज्यपाद प्रातः स्मरणीय को भू–मंडल के मनुष्य अपना शिरोमुकुट समझते थे और हाय ....'[11]

बदरी नारायण चौधरी 'प्रेमघन' ने अतीत का गौरवगान करते हुए अपने नाटक 'भारत सौभाग्य' में सजीव चित्रण किया है –

तजत होत सोच तुम भारत के वासी।
भारत दूर भाग भारत की वासी।।
भारत में विपति छोर रही है छआसी
छायो तम तिमिर सहज जो निसा अमासी
जैमिनि, गौतम, कणाद, व्यास, इषि सरस उठासी
भरत, बालमीकि, कपिल, शंकर सन्यासी।

इसी कड़ी में आगे बढ़ते हुए राधाकृष्ण दास 'महाराणा प्रताप' में सूत्रधार द्वारा कहते हैं कि – अहा, संसार कैसा परिवर्तनशील है। पल–पल इसका रूप बदलता रहता है। क्या यह वही भारत है जिसमें किसी समय लोग आका ा मार्ग में विमानों पर विचरण करते थे, तप, बल से ऋषिगण जिधर जा निकलते थे, प्रकाश हो जाता था। विद्या, कला–कौशल, प्राणिमात्र में शोभायमान थी। अवश्य अब से सब बातें दूर हो गई, अब यह भारत वह भारत नहीं है ..... अब उसमें कोई शोभा ही नहीं रही, नहीं ऐसा कदापि नहीं। यह भारत वही हैं, इसमें सब कुछ है परन्तु काल के प्रभाव से रूपान्तर अवश्य हो गया है किन्तु वही भूमि, वही आकाश, वही मनुष्य, वही पक्षी सब वही हैं।''[13]

भारतेन्दु युगीन नाटककारों ने सुनहरे अतीत के साथ–साथ वर्तमान दुर्दशा का भी सजीव चित्रण किया है। गोपालराम गहमरी ने अपने नाटक 'देश दशा' में तत्कालीन परिवेश का सशक्त चित्रण किया है। इस नाटक में उन्होंने दे ा में व्याप्त भ्रष्टाचार की पोल निर्भीकता के साथ खोलने के साथ ही, चपरासी, वकील तथा पुलिस को भ्रष्टाचार का मुखड़ा बनाकर जनता के बीच रखा – ''लीजिए, देश दशा समर्पित है। अंगीकार कीजिए! इसकी प्रत्येक पंक्ति में दुःख की शृंखला भरी पड़ी है, इससे आपका मन तो अवश्य दुःखेगा, लेकिन बिना दिखाए रहा नहीं जाता।''[14]

भारत सौ पराधीन हाय! हाय! हाय!
भारत सों दीन दुःखत रोवत बिलखाय।।
भारत को वेगि दास भाव से छुड़ाओं
जय भारत, जय भारत, जय भारत गाओं।।[15]

राधाचरण गोस्वामी ने पराधीनता से देश की दुर्दशा का वर्णन अपने नाटक 'अमर सिंह राठौर' में किया है। साथ ही अकाल, महंगाई और निर्धनता ने देश की कमर तोड़ दी थी। प्रेमघन ने इसे पंक्तियों में बाँधा –

भागो भागो अब काल पड़ा है भारी।
भारत पे घेरी घटा विपत की कारी।।[16]

भारतेन्दु युगीन नाटकों में राष्ट्रीयता के अनेक भावों जैसे – देशभक्ति, अतीत का गौरवगान, वर्तमान के प्रति क्षोभ तत्कालीन भ्रष्ट शासन–प्रबंध से असंतोष, अपनी मातृभाषा, संस्कृति तथा धर्म के प्रति अगाध निष्ठा तथा अन्य अनेक राष्ट्र निर्माणात्मक भावों का नवनिर्माण किया गया। इस युग के सभी नाटककार अपने युग के प्रति सजग दिखाई प्रतीत हुए। उन्होंने भारत का अधःपतन अपनी आँखों से देखा था। चारों ओर रुढ़िगत मानसिकता, पि चमी सभ्यता से पैदा हुई दूषित प्रभाव, भ्रष्ट शासननीति, खस्ता आर्थिक अवस्था, आदि ने देश की जनता को खोखला कर रखा था। फलस्वरूप भारतेन्दु युगीन नाटककारों ने राष्ट्रीय चेतना को जन–जन के हृदय में जगाने का भरसक प्रयत्न किया।

निष्कर्ष

भारतेन्दु युगीन नाटकों की कोई भी विधा निरुद्देश्य नहीं है। समस्त नाट्य साहित्य लोकहित एवं राष्ट्रहित की कामना से लिखा जाता है। नाटककारों ने देश के भारतेन्दुयुीन साहित्य में राष्ट्रीय चेतना 113 प्रति राष्ट्रीय चेतना का शंखनाद किया। अपनी–अपनी कलम द्वारा नाट्य साहित्य की विभिन्न विधाओं में राष्ट्रीय एकता के मोती पिरोये गए। आधुनिक काल के प्रथम चरण से ही नाट्यकारों ने अपने परम्परागत आदर्शों, विश्वासों तथा नैतिक मूल्यों को नहीं छोड़ा, साथ ही नवजागरण की पृष्ठभूमि में जनता का सांस्कृतिक विकास भी किया।

भारतेन्दु युगीन नाटककारों ने राष्ट्रीय चेतना को दृढ़ बनाने वाले नाटकों की रचना की है। इन्होंने अपने नाट्य साहित्य लेखन में देश की दुर्दशा का मार्मिक चित्रण करके देशभक्ति जगाने में सफलता प्राप्त की। भारतेन्दुयुगीन नाटकों के साथ–साथ अन्य विधाओं में भी राष्ट्रीय एकता, राष्ट्रगौरव एवं राष्ट्र प्रेम की श्रेष्ठ अभिव्यक्ति हुई। हिन्दी नाटकों के विकास को भारतेन्दु युग में गति मिली। भारतेन्दुयुगीन नाटककारों ने वर्तमान समय की आवश्यकता को समझा और महात्मा गांधी के नेतृत्व में चल रहे स्वाधीनता आन्दोलन में नवयुवकों को प्रेरित करने का महत्वपूर्ण कार्य किया।

संदर्भ –

1. किशोरी लाल गोस्वामी : नाट्य सम्भव, प्रस्तावना, पृ. 2.
2. लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय : भारतेन्दु युगीन हिन्दी नाटक (सम्पादन), डॉ. नगेन्द्र : सेठ गोविन्द दास अभिनंदन ग्रंथ, पृ. 300.
3. पं. अम्बिका दत्त व्यास : 'गो–संकट' नाटक (1882) की प्रस्तावना से, पृ. 9
4. प्रताप नारायण मिश्र : कलि कौतुक रूपक।
5. डॉ. लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय : भारतेन्दु युगीन हिन्दी नाटक (सम्पादन), डॉ. लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय का लेख, पृ. 293.
5. राधाचरण गोस्वामी : अमर सिंह राठौर, पृ. 1
6. देवकीनंदन त्रिपाठी : भारती हरण, पृ. 30.
7. प्रेमघन : भारत सौभाग्य, पृ. 7.
8. राधा कृष्ण दास : महारानी पद्मावती, पृ. 5.
9. डॉ. गोपीनाथ तिवारी : भारतेन्दु कालीन नाटक (सम्पादन), पृ. 364.
10. राधाकृष्ण दास : प्रताप सिंह, पृ. 1.
11. प्रेमधन : भारत सौभाग्य, पृ.